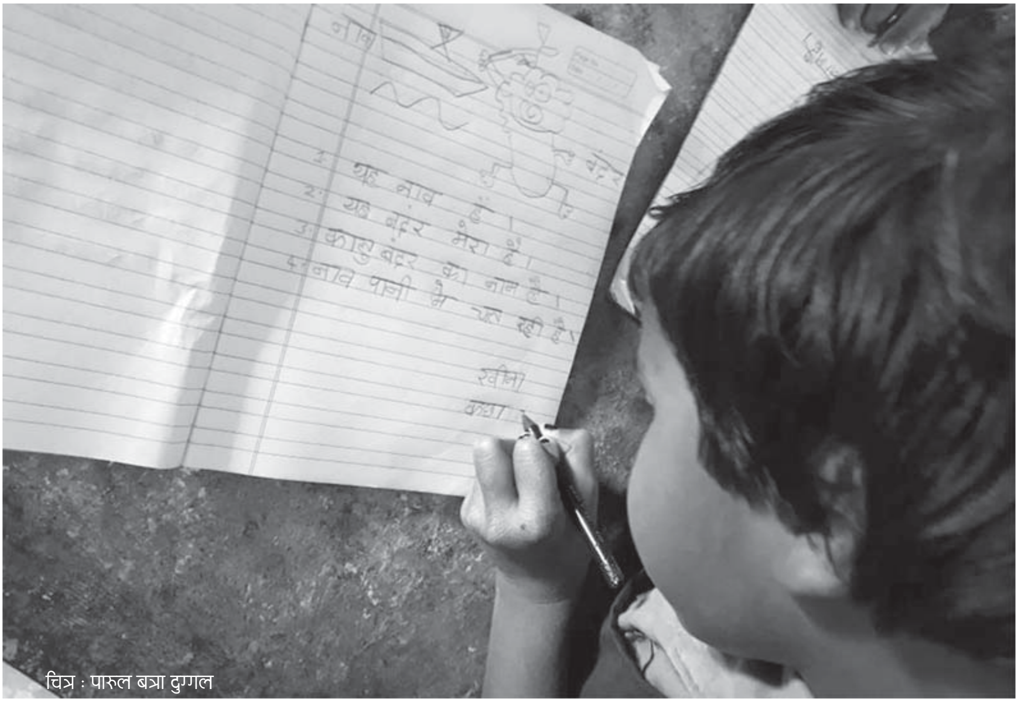
लिखना सीखना : मुश्किल सफ़र के सुगम रास्ते

मदन मोहन पाण्डेय



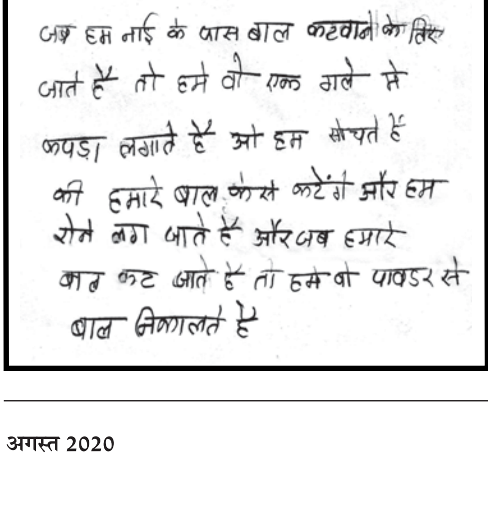
चित्र : पारुल बत्रा दुग्गल

सुनना-बोलना तो बच्चे घर से सीखकर आते ही हैं। यानी बच्चे जब स्कूल आते हैं तब उनके पास एक भाषाई पृष्ठभूमि होती है। पढ़ना-लिखना सिखाने का व्यवस्थित काम बच्चों के लिए स्कूल शुरू करता है। इन्हीं दो कामों में घर और स्कूल को ज़्यादा चुनौतियाँ पेश आती हैं। पढ़ने में कम और लिखने में ज़्यादा। यह लेख भाषा के कौशल 'लिखना', उसे सीखने की मुश्किलों, उनके कारणों और मुश्किलें कम करने हेतु कुछ सलाहों पर केन्द्रित है। इसमें यह स्पष्ट करने की कोशिश है कि लिखना बच्चों के लिए उतना कठिन है नहीं जितना इसे सिखाने के रूढ़ नज़रियों और तरीक़ों (जिसमें पढ़ना भी शामिल है) के कारण यह बन जाता है। नज़रिये का मामला भाषा की प्रकृति से, सामाजिक रूप से भाषा के निर्माण, उपयोग और व्यवहार से जुड़ा है। नज़रिये में यह बात भी शामिल है कि हम बच्चों के लिखना सीखने को देखते कैसे हैं। और तरीक़े वे हैं जिन्हें हम लम्बे समय से लिखना सिखाने के लिए प्रयोग कर रहे हैं, पर जिन्हें हमने कभी आलोचना की नज़र से नहीं देखा। ये दोनों मुद्दे जुड़े हुए हैं और दोनों ही रूढ़ हैं जो लिखना सीखने के लिए मुश्किलें पैदा करते हैं। यहाँ हम पहले मुश्किलों और फिर उन्हें कम करने के तरीक़ों को समझने की कोशिश करेंगे। तो पहले मुश्किलें...

भाषा की प्रकृति की अनदेखी

शिक्षक के रूप में यदि भाषा की प्रकृति की विशेषताओं से हमारा 'परिचय' नहीं है तो लिखना सिखाने के बँधे-बँधाए ढर्रे से हमारा बाहर निकलना और बच्चों को इसे सिखाना कठिन होगा। शिक्षक-प्रशिक्षणों में अकसर इसे छोड़ दिया जाता है। पर इसपर विमर्श आवश्यक है। भाषा हमारे समाज की एक जीवन्त, समग्र (अर्थवान), परिवर्तनशील, गतिशील सम्पदा है। यह मूलतः और मुख्यतः मौखिक रूप से व्यवहार में लाई जाती है। सभी भाषाओं का एक वैश्विक व्याकरण है। भाषाएँ प्राणियों, स्थानों, वस्तुओं के नामों, सर्वनामों, क्रियासूचक, भावसूचक, समयसूचक शब्दों और अव्ययों का विराट संग्रह हैं। भाषाएँ मनुष्य की स्मृति का बड़ा हिस्सा हैं।

बड़े और बच्चे इसी से अपनी भाषा बनाते हैं। किसी समाज ने अक्षर-अक्षर जोड़कर अपनी भाषा के शब्द नहीं बनाए। 'पेड़' इसलिए नहीं बना कि कहीं से 'पे' और 'ड़' अक्षर आ मिले, बल्कि यह एक वस्तु / अर्थ / छवि का समाज द्वारा किया गया नामकरण है जिसे सुन-पढ़ कर हमारे मन में तने, डालियों, फूलों-फलों से सज्जित एक आकार की छवि उभरती है। भाषाओं के अधिकांश शब्द इसी प्रकार हमारे संसार में मौजूद चीज़ों के नामकरण हैं। भाषाओं


नाई नाम- अनुष्का सिंघ 5th

जब हम नाई के पास बाल कटवाने के लिए जाते है तो हमे वो एक गले मे कपड़ा लगाते है ओ हम सोचते है की हमारे बाल कैसे कटेंगे और हम रोने लग जाते है और जब हमारे बाल कट जाते है तो हमे वो पावडर से बाल निकालते है

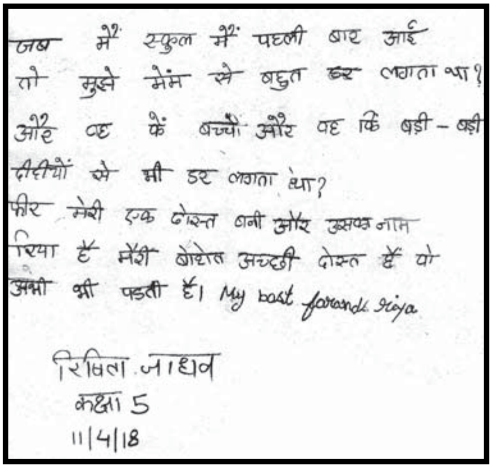
के बीच शब्दों का लेन-देन होता है। पुराने शब्द मनुष्य के साथ यात्रा करते हुए घिसते-मुड़ते हुए दूसरी भाषा का हिस्सा बन जाते हैं (जैसे– ईरान का 'शाह अब्बास' भारत आते-आते हिन्दी में 'शाबाश' बन गया)।

भाषा का स्टाइल / शैलियाँ बनती-बदलती रहती हैं। जैसे– अख़बारों के विकास के साथ समाचार-लेखन की एक शैली विकसित हुई। कविता, कहानी, शब्द-चित्र, पहेलियाँ, लोकोक्तियाँ वग़ैरह भाषा के ललित / सौन्दर्यबोधक रूप हैं। भाषा की इन ख़ूबियों की समझ या स्वीकार्यता न होना पढ़ना-लिखना दोनों के शिक्षण को यांत्रिक बना सकता है।

लिखने की मानसिक प्रक्रिया की उपेक्षा

जब हमारा ध्यान लिखना सीखने की मानसिक प्रक्रिया की ओर नहीं जाता तब भी इसे सिखाना कठिन हो जाता है। बाहरी दुनिया का अवलोकन करते हुए, सार्थक ध्वनि सन्दर्भों को सुनते, छपे शब्दों और वाक्यों को पढ़ते हुए बच्चे / हम उनसे अर्थ ग्रहण करते हैं। विभिन्न अर्थों से जूझता हुआ दिमाग़ उनके बीच सम्बन्ध जोड़ने और उस समूचे सन्दर्भ का सार / सन्देश ग्रहण करने की कोशिश करता है। यही 'समझ' है और इसी को उद्देश्य के अनुसार, अपने हिसाब से चित्रित किया, बोला या लिखा जाता है।

छः साल का एक बच्चा कहानी सुनाने के बाद यह पूछने पर कि बताओ यह कहानी किस चीज़ पर है? अपनी समझ से यह बता देता है, चाहे हम उसे कहानी का शीर्षक पहले से न बताएँ। यह उसके लिए कहानी का 'सार' है। आगे प्रश्न करें तो बच्चे अपने इस 'सार' को खोलते भी हैं। लिखते हुए बच्चे / हम ख़ास आकृतियों में अपनी ओर से कही जाने वाली 'बात' ही गढ़ते हैं। इसमें सोचना, 'स्क्रिप्ट' से बार-बार अपनी कल्पना में जाना और कल्पना से 'स्क्रिप्ट' में वापस आना शामिल है। इस प्रक्रिया में हम मन में मौजूद सन्दर्भ और भाषा-उपयोग के उद्देश्य के अनुसार


जब मैं स्कूल मैं पहली बार आई
तो मुझे मेंम से बहुत डर लगता था?
और वह कें बच्चों और वह कि बड़ी-बड़ी
दीदीयों से भी डर लगता था?
फीर मेरी एक दोस्त बनी और उसका नाम
रिया है मेरी बेस्टेस्त अच्छी दोस्त है वो
अभी भी पढती है। My bast farandi riya

रिखिला जाधव
कक्षा 5
11/4/18

अपनी इबारत को 'एडिट' भी करते चलते हैं। कक्षा के साथियों से उसपर बातचीत और कोई शब्द न आए तो कभी-कभार दोस्त की कॉपी में ताकझाँक भी इसी का हिस्सा है। इसे बहुधा 'अवैध नक़ल' मान लिया जाता है। पर यह हमेशा 'नक़ल' नहीं होती– कभी किसी शब्द की छवि याद न आने पर लिखना सीखने की निर्दोष इच्छा भी हो सकती है। किसी 'स्क्रिप्ट' को समझते हुए नक़ल करना, उससे संक्षिप्त / विस्तृत नोट्स बनाना भी लिखना है। किसी इबारत का मायने समझे बग़ैर नक़ल करना बेकार की क़वायद है। मन से सोचते-समझते हुए लिखना ही स्वाभाविक और रचनात्मक लेखन है।

खण्डित भाषा उपकरण, नीरस सन्दर्भ

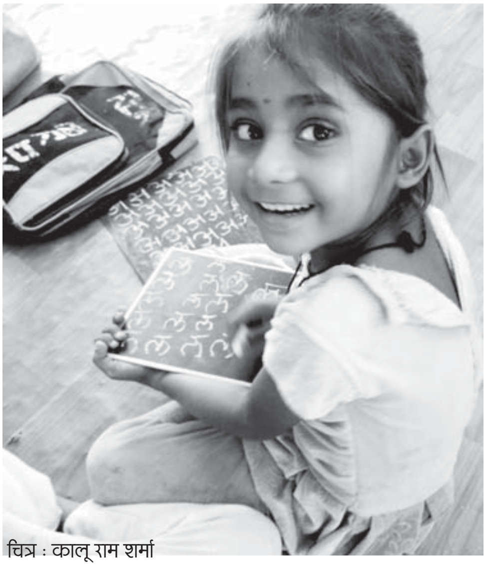
खण्डित भाषा उपकरणों का अर्थ है अकेले और निरर्थक अक्षरों से पढ़ना-लिखना सीखने की क़वायद। लिखने के लिए यह ज़्यादा की जाती है। कई बार अक्षरों से मात्राओं को अलग करके इनके और भी सूक्ष्म टुकड़े बना लिए जाते हैं। इस तरह स्वर, व्यंजन, मात्राओं के क़रीब बहुत सारे संकेत बच्चों को याद करने पड़ जाते हैं। इस दिशा में प्रगति न हो तो कहा जाता है कि अभी बच्चे को अक्षर ज्ञान ही नहीं हुआ। आगे कैसे बढ़ें? कोई बताए 'अ', 'ण' या 'क्ष' में क्या ज्ञान छिपा है? सार्थक शब्दों और वाक्यों के साथ मन की दृश्यात्मक अवधारणाएँ जुड़ी होती हैं, जो लिखते हुए बच्चों को स्मृतियों-कल्पनाओं में ले जाती हैं। अक्षरों के साथ ऐसा नहीं हो पाता। यह न समझना, लिखना सीखने के मामले में नज़रिये से सम्बन्धित सबसे बड़ी कठिनाई है जो ज्ञान निर्माण की पूरी प्रक्रिया को प्रभावित करती है। 'अ से अनार' या 'आ से आम' वाला स्टाइल भी 'खण्डित भाषा उपकरण' ही है। यह वैसा ही है जैसा बच्चों से किसी कुर्सी का चित्र बनवाने के लिए पहले कुर्सी की चारों टाँगें तोड़ देना, उसकी पुश्त और गद्दी उखाड़कर पहले उनके अलग-अलग चित्र बनवाना, फिर इन टूटे अंगों को जोड़कर दुबारा कुर्सी बनाना और उसका चित्र बनाने को कहना।

लिखना सीखने को चुनी गई 'स्क्रिप्ट' / सन्दर्भ / विषयवस्तु यदि बच्चों के मन को नहीं जोड़ पाती तो भी लिखना उनके लिए उबाऊ ही होगा। अनेक पाठ्यपुस्तकों में पढ़ना-लिखना सिखाने के लिए अमर आ, छाता ला या यह राम का तोता है, तोता आम खाता है। मोती का मोर नाच रहा है। गौरी आ, गौरी आ। मोर को दाना दे। तोते को रोटी दे क़िस्म के सन्दर्भ आज भी दिखते हैं। ये सार्थक सन्दर्भ तो हैं, बच्चों के परिवेशीय पात्र भी इनमें हैं, पर साफ़ लगता है कि उन्हें यहाँ 'आ', 'ए', 'ओ', 'औ', की मात्राएँ सिखाने के लिए जमा किया गया है। इसलिए ये सूचनात्मक और कृत्रिम लगते हैं और बच्चों के मन को नहीं जोड़ते। ऐसे सन्दर्भों की घटनाओं में कोई तार्किक संगति और विकास नज़र नहीं आता। एससीईआरटी में काम करने के दौरान मैंने पाया कि अनेक स्कूलों में लिखना सीखने के लिए पहली-दूसरी कक्षाओं के ब्लैकबोर्ड पर 40 से 60 तक वैचारिक रूप से परस्पर असम्बद्ध शब्द लिखे रहते थे। यद्यपि शिक्षकों ने मेहनत और अच्छे उद्देश्य से अनेक पाठों से चुनकर यह सूची बनाई होती थी। पर बिना चर्चा के नक़ल के लिए दिए ऐसे शब्द बच्चों के मन में कोई दृश्य नहीं रचते। इसीलिए वे लिखना सीखने में बच्चों में रुचि नहीं जगा पाते। अतः लिखना सिखाने के लिए प्रयुक्त विषयवस्तु का

चुनाव भी उतना ही महत्त्वपूर्ण लगता है जितना उसे सीखने की प्रक्रिया।

जल्दबाज़ी

कक्षा में लिखने पर काम करते हुए किसी दबाव में हम अकसर जल्दबाज़ी में फँस जाते हैं। यह स्थिति बच्चों को भी दबाव और कठिनाई में डाल देती है। उन्हें सहज गति से नहीं सीखने देती। ज़रा हम अपनी घर की मौखिक भाषा सीखने के समय को याद करें। यह क़रीब ढाई से तीन साल का होता है। लेकिन स्कूल में हम बच्चों से दो साल में ही पढ़ने-लिखने में सारी कुशलता पाने की उम्मीद पाल लेते हैं। जबकि उनमें से तमाम बच्चे पहली पीढ़ी के स्कूली विद्यार्थी होते हैं। इस मामले में हमारी स्कूल-प्रणाली को ज़्यादा उदार होना होगा। शुरुआती साक्षरता के लिए कम-से-कम तीन वर्ष ज़रूरी हैं।


चित्र : कालू राम शर्मा

लाइन, सुलेख और रबर-पेंसिल

कक्षा एक और दो में सीधी लाइन और सुलेख के दबाव के कारण काग़ज़ पर लगातार अक्षर लिखते-मिटाते बच्चों का दृश्य आम है। यह प्रवाहपूर्ण भाषा लिखना सीखने में रुकावट है। विकासनगर (देहरादून) के स्कूलों में 'पोटली लाइब्रेरी' कार्यक्रम के फ़ॉलोअप में स्कूलों में सुनकर कहानी लिखने की गतिविधि कराई गई। इसमें कक्षा दो-तीन से कक्षा पाँच तक के बच्चों को साथ बिठाकर कोई कहानी सुनाई जाती और फिर सुनी कहानी लिखने को कहा जाता। तब कुछ स्कूलों में बच्चों की यह प्रतिक्रिया हुई— ज्यों ही कहानी लिखने के लिए उन्हें सादे काग़ज़ मिलते उनके हाथों में स्केल, पेंसिलें और रबर आ जाते, वे सबसे पहले काग़ज़ पर रूल खींचने में जुट जाते। रूल टेढ़े हुए तो रबर से मिटाकर फिर सीधा खींचने की कोशिश करते। फिर होती एक-एक शब्द को सीधी क़तार में लिखने और एक-एक शब्द / अक्षर को सुघड़ / सुडौल बनाने की क़सरत। अक्षरों के अंग-प्रत्यंग दुरुस्त करने को बच्चे उन्हें बार-बार मिटाते और लिखते। जब तक वे अक्षर या शब्द की बनावट से सन्तुष्ट न होते, नया शब्द शुरू नहीं करते। बिना रूल के काग़ज़ हमने उन्हें जानबूझकर ही उनकी प्रतिक्रिया जानने के लिए दिए थे।

कक्षाओं में इस कारण कहानी लिखने की गति बहुत धीमी रही। चौथी-पाँचवीं के बच्चे भी क़रीब 40 से 45 मिनट में चार से छः वाक्य तक ही लिख पाए। बच्चों के मन में बहुत गहराई तक यह बात बैठी हुई थी कि लिखने का मतलब सीधी लाइन में और सुलेख में लिखना है। कोई रोचक प्रसंग सुनकर उसे अपनी भाषा में लिखने का आनन्द यहाँ गौण हो गया था। वे बार-बार कहानी की स्मृति, सीधी लाइन और अक्षरों की बनावट के बीच भटक रहे थे। बच्चे / हम किसी सुनी हुई कहानी या प्रसंग को लिखने से पहले उसे अपने दिमाग़ में, अपनी भाषा-शैली में, समूचा पुनर्व्यवस्थित करते, सजाते हैं, ताकि उसे काग़ज़ पर उतार सकें। सीधी लाइन और अक्षरों की सुघड़ता की अत्यधिक चिन्ता उन्हें यह नहीं करने देती। अपने लिखे को बार-बार मिटाना उन्हें अपनी ग़लतियों के प्रति अत्यधिक सशंक बनाता है।

यह सशंकता उनके समूचे सन्दर्भ में सोचने, उनके लिखने की गति और आत्मविश्वास को

कम करती है। जब हमने रबर और स्केल जमा कर लिए तो कुछ देर तो वे पशोपेश में रहे, पर फिर पहले की अपेक्षा ज़्यादा और जल्दी लिख पाए। फिर भी पेंसिल उन्हें परेशान करती रही। वे ज़ोर लगाकर लिखते तो उसकी छोटी-सी नोक टूटती या जल्दी घिस जाती। फिर बार-बार उसे छीलना पड़ता। हमने तो इसे भी लिखने की एक कठिनाई ही समझा। यद्यपि बच्चों से सुलेख में लिखवाना स्कूल का अच्छा उद्देश्य है, पर यदि इससे प्रवाहपूर्ण ढंग से लिखना बाधित हो तो हमें तरीक़ों पर पुनर्विचार की ज़रूरत है।

अशुद्धियों का डर

स्कूल प्रणाली में बच्चों की अशुद्धियों को देखने का एक तंग नज़रिया व्याप्त है। बच्चे लिखना शुरू नहीं करते कि हम बड़े शुद्धता का झण्डा लेकर पहले खड़े हो जाते हैं। इससे बच्चों में अशुद्धियों / ग़लतियों को लेकर डर या एक प्रकार का असुरक्षा बोध घर कर जाता है। इससे पहले वर्णित स्कूल अनुभव में बच्चे इसीलिए अपने लिखे को बार-बार मिटा रहे थे। हम अशुद्धियों को लिखना सीखने की प्रक्रिया में हुई ग़लतियों के रूप में नहीं स्वीकारते। प्रशिक्षणों में इसे भाषा शिक्षण की प्रमुख समस्या के रूप में रखा जाता है। इसके समाधान हेतु स्कूलों में तीन प्रमुख उपाय प्रचलित हैं। सबसे पहला, बच्चों को बार-बार बारहखड़ी लिखाना; दूसरा, 'अक्षर + मात्रा = पूरा अक्षर' के रूप में भाषा लिखाने का अभ्यास; और तीसरा, अशुद्ध लिखे गए शब्दों को बच्चों द्वारा लिखे गए नोट्स के नीचे शिक्षक द्वारा शुद्ध रूप में लिखकर एकाधिक बार नक़ल करके लिखवाना। अनेक शिक्षक अशुद्ध शब्दों के ऊपर ही बारीक़ अक्षरों में शुद्ध शब्द लिख देते हैं।

अपने अनुभवों के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि अशुद्धियाँ ठीक करने के ये दो उपाय ख़ास मददगार नहीं हैं। ये उपाय अशुद्धियाँ ठीक करने से ज़्यादा बच्चों के लिए ऊब पैदा करते हैं। अशुद्ध शब्द के ऊपर बारीक़ अक्षरों से इस उम्मीद में शुद्ध शब्द लिख देना– कि बच्चा उसे देखकर सही शब्द पकड़ लेगा– ज़्यादा आशावादी होना है। अधिकांश बच्चे उसे देखते ही नहीं या देखकर भूल जाते हैं। एक ग़लत शब्द को सन्दर्भहीन बनाकर पाँच-दस बार उसकी नक़ल कराना तो हमीं को उबा देता है। तो बच्चे को भी उबाएगा।

विविध लेखन तलों (स्पेसेज) की उपेक्षा

हमारे स्कूलों में लिखना ज़्यादातर कॉपी के पन्नों तक सीमित रहता है। इससे एक तरह की एकरसता पैदा होती है। बाक़ी कामों के साथ लिखना सीखना भी अनेक सतहों पर हो सकता है। भारत के कुछ राज्यों में 1998 से 2003 तक चले 'ज़िला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम' से सम्बन्धित प्राथमिक स्कूलों के कमरों और बरामदों की दीवारों के निचले हिस्से को हरे रंग से पेंट कर दिया गया था। मक़सद था कि दीवारों के इस रंगे हुए हिस्से पर बच्चों को आज़ादी से चित्र बनाने और लिखना सीखने का मौक़ा मिले। यह प्रयोग आंशिक रूप से ही सफल हुआ, लोकप्रिय नहीं हो पाया। कई सतहों पर लिखने के साथ बच्चे 'स्पेस' का उपयोग भी सीखते हैं। हम उन्हें ऐसे मौक़े कम ही देते हैं।

श्रुतलेख के उद्देश्य से अनभिज्ञता

लेखन अभ्यास के तौर पर स्कूलों में श्रुतलेख बहुतायत कराया जाता है। पर इससे ज़्यादा अपेक्षाएँ जोड़ ली गई हैं। एक धारणा यह है कि इसका उद्देश्य बच्चों को 'शुद्ध लिखने' का अभ्यास कराना है। यह धारणा ठीक नहीं। इसका मुख्य उद्देश्य तो पुराने समय से ही बच्चों की लेखन गति बढ़ाना रहा है। यह न समझना और 'शुद्धता' के लिए इसे कराने पर शिक्षक और बच्चों दोनों का काम कठिन बनता है। लिखना सीखने की और कठिनाइयाँ भी हो सकती हैं जिन्हें लिखना सीखने-सिखाने की विभिन्न प्रक्रियाएँ देखकर समझा जा सकता है। पर यहाँ इनकी एक सीमा रखनी होगी। अतः अब ऊपर वर्णित इन कठिनाइयों को कम करने हेतु कुछ तरीक़े सुझाना ठीक होगा जो आज़माए हुए और स्वाभाविक हैं।

मुश्किलें कम करने के तरीक़े

लिखना सीखने की मुश्किलें कम कैसे हों इसके लिए प्रशिक्षण और शिक्षण दोनों स्तरों पर आगे लिखी कोशिशें करनी होंगी।

भाषा की प्रकृति और लिखना सीखने की मानसिक प्रक्रिया पर संवाद

शैक्षिक संवादों में शिक्षक साथियों से बार-बार यह तथ्य साझा करने की ज़रूरत है कि लिखना यांत्रिक कौशल नहीं, बल्कि हमारी कल्पनाशीलता की अभिव्यक्ति है। पुराने पड़ चुके लेखन तरीक़ों की मित्रतापूर्ण आलोचना के साथ कहा जाना चाहिए कि ये ज़्यादा समय में कम नतीजे देते हैं।

नए तरीक़े शिक्षकों की बेहतर मदद करेंगे। उनके बीच कुछ पुस्तकों और लेखों पर चर्चा-विमर्श हो जैसे– *बच्चे की भाषा और अध्यापक* (डॉ. कृष्ण कुमार), *पढ़ने की दहलीज़ पर, भाषा की समझ* (एनसीईआरटी के प्रकाशन) और *भाषा सीखे न सिखाए, पर बिन सीखे आ जाए* (चर्चापत्र– रमाकांत अग्निहोत्री) एवं अर्थपूर्ण ढंग से लिखना सिखाने के अनुभवों पर अनेक शिक्षकों के लिखे-छपे अनुभव (रेखा चमोली, हेमराज भट्ट (उत्तराखंड) की डायरी। 'स्वभाव' की समझ से जोड़कर ही नए तरीक़ों, उपकरणों का महत्त्व समझा जा सकता है। 'प्रकृति' पर बात का मक़सद शिक्षकों को इस बात के लिए भी तैयार करना है कि वे बच्चों को सीखने के साथ भाषा का आनन्द उठाने के मौक़े भी दें।

सार्थक, समग्र भाषा उपकरणों का उपयोग

लिखना सिखाने के लिए अकेले वर्णों का विकल्प सार्थक, समग्र भाषा ही है। इस नज़रिये से लिखना सिखाने के लिए सबसे पहला टीएलएम है बच्चों के अनुभवों / स्मृतियों को लिखित रूप देना। यह उनके विचारों से निकला हुआ टीएलएम है। अतः बहुत ताक़तवर सन्दर्भ है। ये सन्दर्भ शब्द और वाक्य दोनों रूपों में हो सकते हैं। बेहतर तो यह है कि सन्दर्भ के रूप में इस्तेमाल किए जा रहे बच्चों के शब्दों और वाक्यों से हम एक पूरा दृश्य बुनें। यह दृश्य बच्चे के दिमाग़ में निर्मित या पुनर्निर्मित हो जिसमें बच्चे को अनेक परिवेशीय और परिचित वस्तुएँ एक दूसरे से तार्किक रूप से जुड़ी हुई दिखें। परस्पर असम्बद्ध शब्द या वाक्य भी, चाहे वे सार्थक हों, पढ़ना-लिखना सीखने में उतना असर नहीं पैदा करते जितना ये दृश्य पैदा करते हैं। इस तरह बच्चों की स्मृति में बैठे अनुभवों जैसे– देखे हुए तालाब, किसी नाले, सड़क आदि का सरल शब्दचित्र लिखना सीखने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। छः साल का बच्चा इसके साथ थोड़ा पढ़ने के अभ्यास के साथ एक या दो वाक्य कॉपी पर उतार सकता है। इनमें सुनना-बोलना-पढ़ना-लिखना सब साथ चलेगा। लिखने के लिए वाक्यों की मात्रा क्रमशः बढ़ाई जा सकती है। सुनी, कही और पुस्तकालय की कहानियाँ-कविताएँ इनके साथ या थोड़ा बाद में ले सकते हैं। क्रमशः सन्दर्भों का आकार बढ़ाया जा सकता है।

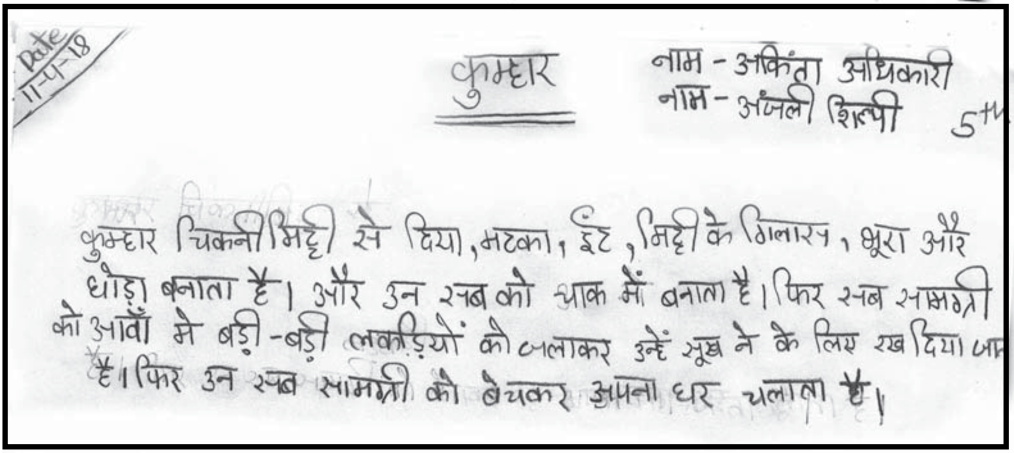
कट-कार्डों के साथ, कक्षा के नामों, बच्चों के परिवारजनों के नामों, खाने-पीने के अनुभवों पर बातचीत और फिर लिखना हो सकता है। शुरुआती 20 से 30 शब्द वाक्य आगे लिखना सीखने का आधार बन जाते हैं।

शिक्षकीय धैर्य

लिखना (पढ़ने के साथ) सिखाने के लिए बच्चों की सीखने की विविध गतियों के साथ शिक्षक को सक्रिय तालमेल बैठाना ज़रूरी है। तरीक़े सही हैं तो थोड़ा आगे-पीछे करके सभी या अधिकांश बच्चे लिखना सीखेंगे। पर अपेक्षित नतीजों के लिए न्यूनतम तीन साल लम्बा धैर्य ज़रूरी है।

रबर, पेंसिल, स्केल को विदा

नए नज़रिये से बच्चों को लिखना सिखाना है और नतीजे पाने हैं तो इन तीनों की 'भाषा लिखने' की कक्षा से विदाई ही बेहतर है। कक्षा एक से तीन तक तो ज़रूर ही। बच्चों के लेख


Date 11-5-18

कुम्हार

नाम - अंकिता अधिकारी
नाम - अंजली शिल्पी 5th

कुम्हार चिकनी मिट्टी से दिया, मटका, ईट, मिट्टी के खिलौने, भूरा और घोड़ा बनाता है। और उन सब को चाक में बनाता है। फिर सब सामग्री को आवाँ मे बड़ी-बड़ी लकड़ियों को जलाकर उन्हें सूख ने के लिए रख दिया जाता है। फिर उन सब सामग्री को बेचकर अपना घर चलाता है।

से शुरुआती कक्षाओं में इतनी ही अपेक्षा होनी चाहिए कि वह स्पष्ट पढ़ने में आए। अक्षर इतने न बिगड़ जाएँ कि शब्द का अर्थ ही न समझ आए या बदल जाए। बच्चों से रूलदार और बिना रूल दोनों ही काग़ज़ों पर लिखाया जाए। खड़िया से दीवारों या बोर्ड पर चित्रकारी और लेखन हो। पतली लकड़ी (चैलियों) से मिट्टी पर, स्केच पैन या मोटे ब्रश से चार्ट पर लिखने और चित्रकारी के मौक़े मिलें तो उनकी अँगुलियों में सधाव आएगा, वे मनचाही आकृतियाँ स्पष्टता से बना पाएँगे और कई तरह का स्पेस मैनेजमेंट सीखेंगे। यह लिखने को परोक्ष मदद पहुँचाएगा। उनसे कहें कि कॉपी पर ख़ुद लिखते हुए जो ग़लत लगे उसे एक लाइन से काटकर आगे दुबारा लिख दें। बस! इस मामले में डॉट पैन उपयुक्त है। जिन शिक्षकों का मन न माने वे चौथी-पाँचवीं कक्षाओं में सुलेख के विरल अभ्यास (आगे-पीछे झुका लेख, सीधा लेख वग़ैरह) पैन से करा सकते हैं।

भाषा को सही (शुद्ध) बरतने के लिए अभ्यास

अशुद्धियों का मसला लिखित भाषा के सन्दर्भ में ही ज़्यादा उठता है। मौखिक भाषाई व्यवहार के दौरान बहुधा ध्यान शुद्धि-अशुद्धि की ओर जाता ही नहीं। मुख्यतः लिखना सीखते हुए तीन प्रकार की 'अशुद्धियाँ' देखी जाती हैं। पहली, मात्राओं की; दूसरी, संयुक्ताक्षरों की; और तीसरी, व्याकरण सम्बन्धी। देर सवेर हमें समझना होगा कि तीनों ही तरह की ग़लतियाँ लम्बे समय से सन्दर्भहीन भाषाई क़वायद कराने का 'साइड इफ़ैक्ट' हैं। कैसे? अक्षरों से 11 मात्राओं को अलग कर देना बच्चों के लिए दो दुविधाएँ पैदा करता है। पहली, कौन-सी मात्रा आगे, पीछे, ऊपर, नीचे कहाँ लगेगी? और दूसरी, वह छोटी है कि बड़ी? इन दुविधाओं में ये ग़लतियाँ होती हैं। जब शब्द मात्राओं व अर्थ सहित अभ्यास का हिस्सा पहले से ही होंगे, तब एक ही चुनौती होगी– शब्द-ध्वनि से छपे शब्द / शब्दाकृति को जोड़ने की अधिकाधिक क्षमता पाना। व्याकरण की ग़लतियों का मुख्य कारण बच्चों को शुरू से ही व्याकरणिक भाषा-संरचनाओं (अर्थपूर्ण वाक्य-शब्द-सन्दर्भ) के साथ भाषा / लिखना न सिखाना है। इनके उपयोग के साथ वह व्याकरणसम्मत भाषा संरचनाओं को शुरू से ही आत्मसात कर रहा होगा। वैसे भी वह एक भाषा का व्याकरण तो घर से साथ लाता ही है। हम इस 'सामग्री' की परवाह नहीं करते (यहाँ आशय बच्चों को शुरू से ही व्याकरण के नियम बताने लगना नहीं है)।

स्कूल की माध्यम भाषा अलग हो तो परिवेशीय भाषा के प्रभाव में भी बच्चे लिखने में कुछ ग़लतियाँ करते हैं। पर स्कूल में भाषा शिक्षण का तरीक़ा आधुनिक व रुचिकर है तो बच्चे उन्हें ख़ुद ठीक कर लेते हैं। लिखने की अशुद्धियों और व्याकरणिक ग़लतियों को लेकर

एक सूत्र अपनाया जा सकता है– पहली से तीसरी कक्षा की छ:माही तक ‘रुचिकर तरीक़ों से अधिकाधिक भाषा उपयोग कराना’। इसके बाद ही अशुद्धियों / ग़लतियों पर ध्यान देना। इसके लिए दो गतिविधियाँ इस प्रकार हैं :

1. चौथी एवं पाँचवीं कक्षा में भाषा की अलग-अलग संरचनाओं को एक-दूसरे में बदलने का काम कराएँ, जैसे– छोटे समूहों में कविता को कहानी, कहानी को कविता, समाचार को कहानी, कहानी को समाचार में बदलना, आदि। इस काम में बच्चे भाषा के अर्थ और विचार का स्वाद लेते हुए उसका ढाँचा बदलने की चुनौती से जूझेंगे। बार-बार दी गई ‘स्क्रिप्ट’ पढ़ेंगे और उसके अनेक शब्दों को अपनी नई ‘स्क्रिप्ट’ में फ़िट करेंगे। इस प्रक्रिया में वे शब्द, अर्थ, मात्रा, व्याकरण सभी से दो चार होंगे और उनसे निबटेंगे। उनसे किसी लिखित कहानी या प्रसंग को समय, पात्र और परिवेश बदलकर लिखने को कहें। ऐसा करते हुए वे भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में भाषा का उपयोग करना समझेंगे।

2. सुनकर कहानी लिखने को दें। लिखी कहानियों से ग़लत शब्दों की सूची बनाएँ। इनके सही रूप के शब्दकार्ड बनाएँ। हर शब्द पर अभिनय सहित बात करें कि शब्द कितने सन्दर्भों में उपयोग होता है। इन शब्दों पर वाक्य बनवाएँ / लिखवाएँ।

लेखन गति बनाने हेतु श्रुतलेख

इसका काम तब है, जब बच्चों को भाषा लिखना आ जाए। इसके दो उद्देश्य हैं। पहला, सजग होकर सुनना; और दूसरा, लेखन गति बढ़ाना। श्रुतलेख की विषयवस्तु रोचक हो और यह पाठ्यपुस्तक के बाहर से ली गई हो। इसे लिखाते हुए किसी पद-वाक्य को दोहराया नहीं जाता– ऐसा करने से पहला उद्देश्य समाप्त हो जाता है। बच्चों की क्षमता के अनुसार इसके बोलने की गति कम, ज़्यादा की जानी चाहिए। यह पारम्परिक गतिविधि इसी रूप में करना ठीक है।

बड़ी कक्षाओं में ज्ञान के जटिल रूपों को भेदने की एक राह पढ़ने-लिखने की क्षमता से होकर भी जाती है। हम अपने बच्चों को इस राह पर लाना चाहते हैं तो पढ़ने के साथ लिखना सीखने-सिखाने की विधियों को फिर-फिर सोचते और नया करते रहना होगा। समझदारी से ज्यादा नतीजे देनेवाली तनाव व भयरहित विधियाँ अपनानी होंगी।

मदन मोहन पाण्डेय को स्कूली शिक्षा और शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने का लगभग साढ़े तीन दशकों का अनुभव है। आप अनेक राज्यों के शिक्षकों एवं स्वयंसेवी संस्थाओं के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों के निर्माण में शामिल रहे है। एस.सी.ई.आर.टी. उत्तरप्रदेश के शैक्षिक जर्नल ‘संकल्प’ के सम्पादक-मंडल का सदस्य रहे है। वर्तमान में वे अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन देहरादून में कार्यरत हैं।
सम्पर्क : madan.pandey@azimpremjifoundation.org